International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue 5; September 2016; Page No. 84-87

जैन रामायणों में वर्णित राम के स्वरूप का तुलनात्मक अध्ययन है

डॉ० अनुपमा छाजेड़

श्री उमिया कन्या महाविद्यालय, रंगवासा, राऊ

सारांश

भारत के जन-जन के मन में 'राम' शब्द इस गहराई से बैठ गया है कि राम नाम के बिना हमें हमारी संस्कृति; धर्म अधूरा-सा प्रतीत होता है। राम अनेक शताब्दियों पूर्व से ही भारत के बहुजन के हृदय के हार, श्रद्धा व भक्ति के केन्द्र रहे है। राम" नाम की सुधा ने ही भारत को अपने पतन काल में भी जीवित बनाये रखा और उसको पुन: उन्नति की और अग्रसर किया। अतः हमें ऐसे 'राम' जो जन-जन के तन मन में समाये हुए हैं, जिनका हमारे धर्म; संस्कृति से इतना गहरा संबंध है उस राम शब्द का तात्पर्य क्या हैं? उनका स्वरूप क्या हैं विभिन्न चिन्तको ज्ञानियों एवं भक्तों के द्वारा राम शब्द के विविध अर्थ प्रस्तुत किए गए हैं राम के मर्यादा पुरुषोंत्म रूप को ध्यान में रखकर ही संपूर्ण वर्णन मिलता है।

मूल शब्द: जैन रामायणों, राम

प्रस्तावना

"अथर्वेदीय पूर्वतापमीय उपनिषद इस शब्द की व्युत्पत्ति और अर्थ विविध रूपों में प्रस्तुत करता है। संस्कृत 'रा' धातु का अर्थ है दान देना। विश्व के साधु मनुष्यों को हर प्रकार के दान देना ही राम का शील स्वभाव था। संस्कृत की ही एक अन्य धातु 'राज' चमकने के अर्थ में मिलती है। राम शक्ति एवं सौन्दर्य के पूंजीभूत स्वरूप थे। संस्कृत की इन्ही दो धातुओं से 'राम' शब्द का रा लिया गया है। 'महीं' यानि पृथ्वी पर राम की लीला का प्रसरण हुआ है अत: 'मही' का 'म' ही 'राम' शब्द का 'म है।"[1]

'अभिराम' शब्द सौंदर्य व्यंजक है उससे भी 'राम' शब्द की उत्पत्ति मानी जाती है। राक्षसों के लिए राम साक्षात् मरण स्वरूप ही थे। अत: राक्षस का 'रा' एवं मरण का 'म' लेकर राम शब्द की उत्पति बतलाई जाती है।[2] राम के मर्यादा पुरूषोत्तम रूप को ध्यान में रख कर बतलाया गया है कि जिस प्रकार राहू ने मनसिज अर्थात् चन्द्रमा को पराजित किया है उसी प्रकार राम ने मनसिज अर्थात् काम को पराजित किया है। अत: राहू के 'रा' और मनसिज के 'म' से राम शब्द बना।[3] राम शब्द की एक दार्शनिक व्युत्पत्ति भी मानी गई है। जिस शाश्वत आनन्द स्वरूप समग्र विश्व चेतना के केन्द्र एवं सनातन ब्रह्मा के ध्यान में मग्न होयेगी, परमानंद में लीन हो जाते हैं, रमण करते हैं वही राम है। यहाँ 'राम' अर्थात् खेलना धातु से राम शब्द क्री व्युत्पत्ति की गयी है।[4] वैदिक साहित्य में दशरथी राम, परशुराम या बलराम का कहीं भी वर्णन नहीं है। फिर भी राम शब्द कुछ राम नामक व्यक्तियों का उल्लेख कई स्थानों पर हुआ है। सायण अपने भाष्य में 'राम' का अर्थ रमणीय पुष्ट करते हैं।[5] ऋग्वेद में 'राम' का अन्य प्रतापी यजमानों के साथ उल्लेख हुआ है। जिससे केवल यही प्रतीत होता है कि राम नामक कोई राजा हुआ होगा। इसके अतिरिक्त एतरेय ब्राह्मण में "राम मागर्वेय' शत्पथ ब्राह्मण में "राम ऋतुजातेय" का उल्लेख मिलता है। किन्तु इसका कोई संबंध रामायण की कथा से ही नितान्त असंभव है।[6]

जैन कवि बनारसीदासजी, ने नाटक समयसार में राम एवं रामरस पर सुन्दर सम्मति व्यक्त की है। वे कहते हैं कि - "आत्मा और राम एक ही हैं। इनमें तब तक ही दुविधा है जब तक निर्विकल्प समाधि दशा प्राप्त नहीं हुई है, व्यवहार में ये दो हैं परन्तु निश्चय से ये एक है। आत्मा ही राम (ज्ञान) है और ज्ञान ही आत्मा है, राम है। वे और आगे कहते हैं कि समता ही राम है, ममता ही संसार है, जो रमते राम (साधु) को नहीं जानता, आत्मा को नहीं जानता वह वास्तव में अपराधी है, संसारी है, मुमुक्षु तो राम (आत्मा) एवं ज्ञान की ही उपासना करता है। संसारी जीव, केवल राम की ही उपासना करता है।"[7]

कविवर बनारसीदास जी ने राम क्रो राष्ट्रीय एकता का प्रतीक माना है। राम हमारे हृदय के हार है, जयमाल है, महान है, मर्यादा पुरुषोत्तम है, मोक्षमार्गी है, तपस्वी हैं, श्रेष्ठ है, ज्ञाता है, ज्ञानी है, परमात्मा है, रागद्वेश से रहित है, परम पुरूषोत्तम है, हमारे आदर्श है, हमारे प्रतीक हैं।[8]

स्व. श्री मनोहर वर्नी सहजानंदजी के शब्दों मैं -"जैन परम्परा में नाम का महत्व नहीं है, कार्य का महत्व है।सभी अरिहंत और सिद्ध एक जैसे हैं, राम भी अरिहंत पद को प्राप्त कर चुके है। अतः वे श्रेष्ठ हैं, हमारे आराध्य है। राम हमारे हृदय हैं, हृदय के केन्द्र है।[9] इस प्रकार जैन कवियों के अनुसार आत्मा ही राम है। वे मर्यादा पुरुषोत्तम राम थे।

जैन रामायणों में राम को मर्यादा पुरूषोत्तम राम माना है।हमारे अध्ययन ग्रंथ रविषेण कृत पद्मपुराण, विमलसूरि कृत पउमचरियं तथा स्वयंभू कृत पउमचरिउ में राम के अध्ययन के आधार पर हमें थोडा सा भी अन्तर नहीं मिला तीनों कवियों ने राम के व्यक्तित्व को समान रूप से ही देखा। किसी मैं भी राम के स्वरुप या चरित्र का सूक्ष्म अंतर भी नहीं हैं और इतनी अधिक समानता है कि इनके स्वरूपों का वर्णन अलग-अलग पढ़ने पर यदि लेखक या कृति का नाम न ज्ञात हो तो यह पता लगाना मुश्किल होगा कि ये किस कवि के 'राम है। तीनों ही जैन रामायणों में मुनिवरों ने समग्र रूप मे राम के स्वरूप को एक जैसा प्रस्तुत किया: इससे रामका चरित्र जैन धर्म में मान्यता प्राप्त एक ही चरित्र बन गया। यदि राम के चरित्र में मत भेद होता तो राम के स्वरूप स्पस्ट होने में कठिनाई होती व इन कृतियों को समाज में इतना सम्मान व प्रतिष्ठा भी प्राप्त नहीं होती यदि राम के चरित्र की गणना में विभेद उत्पन्न होता तो वह समष्टिगत न होते हुए व्यक्तिगत हो जाता और यह रामके चरित्र को निम्मता के शिखर पर ले जाता। चरित्र में समानता होने के कारण ही जैन धर्म में राम का स्वरूप समष्टिगत हो पाया है और ये कृतियाँ समाज में श्रेष्ठता को प्राप्त कर सकी। कृतियों का समाज में प्रतिष्ठित व लोकप्रिय होने का सिर्फ यही एकमात्र कारण है कि इनकी कथा राम के चरित्र; राम के स्वरूप रामके

आदर्श, राम की महानता, राम के शील, रामके सौन्दर्य आदि को कवियों ने एक ही नज़र से देखा है यदि उनकी निगाहें अलग-अलग तरह से राम के चरित्र को देखती या उनके विचारों में मतभेद होता तो वे हमारे अध्ययन के लिये तो आसान हो जाता क्योंकि हमें तर्क-वितर्क देने में सुविधा होती, परन्तु क्या ऐसा राम का चरित्र धर्म में स्थान पाता? क्या जनता का प्रिय होता? क्या वह समष्टिगत कहा जाता? क्या राम का आदर्श हमारा आदर्श बनता? क्या उनके सौन्दर्यशील के उदाहरण दिये जाते? क्या वे मर्यादा पुरूषोत्तम के रूप में माननीय होते? ऐसे कई प्रकार के प्रश्न हमारे मन में उत्पन्न होते है क्योंकि यदि उनमें असमानता होती तो हमारे मन में भी व सभी लोगों के मन में तर्क-वितर्कप्रारंभ हो जाते तथा मन में भ्रम भी उत्पन्न होजाता कि क्या मालूम वास्तव में राम ऐसे थे कि नहीं? अत: यह एक सबसे बड़ी विशेषता है कि जैनाचार्यों ने राम को एक ही दृष्टि से देखा। उत्तर पुराण, आदि पुराण में भी सीता के जन्म आदि व राम की माता का नाम सुबला[10] आदि सूक्ष्म अंतर मिलते हैं, परन्तु राम के स्वरूप में उनमें भी कही भी अंतर नहीं मिलता। वैसे तो हमारे अध्ययन का आधार तो हमने तीन जैन रामायणों पद्मपुराण, पउमचरियं व पउमचरिउ को बनाया है जो कि क्रमश: रविषेण, विमलसूरि व स्वयंभू द्वारा रचित है। अत: हम यहाँ सारांश में राम के ऐसे स्वरूप का अध्ययन करेंगे जो कि तीनों पुस्तकों के राम के स्वरुप को स्पष्ट करता है अर्थात् स्वयंभू; रविषेण तथा विमलसूरि के अनुसार राम का स्वरूप निम्न प्रकार से हम समझ सकते हैं –

(1) जैन रामायणों में अनेक पात्र है परंतु इसके प्रमुख नायक 'राम' है। राम का चरित्र आदर्श चरित्र हैं। 'इनमें राम को "पद्म" कहा गया। जैन रामायणों में राम को "पद्म" कहा गया है इसका कारण है कि जैन साहित्य में कृष्ण के भाई बलरामको भी राम ही कहा जाता है इसलिए कवियों ने इसका नाम बदल दिया जैसे उन्हें राम, राघव, रामचंद्र भी कहा गया परन्तु पुस्तक का नाम व मुख्य नाम पद्म पर ही रखा गया क्योंकि वे कमलनयन थे (पद्मकमल दल नेत्र वाले पउमचरियं 25/8) पुत्र को देखकर दशरथ ने अपने पुत्र का नाम पदृम या पउम रखा।

(2) राम का मुख कमल के समान सुन्दर था। उनका शरीरिक सौष्ठव अत्यन्त आकर्षित था। वे जहाँ जाते लोगों के मन को भजाते थे। वे रूप सौंन्दर्य के साथ साथ गुण सौन्दर्य के भी धनी थे।

(3) वे अपूर्व बल शक्ति के परिचायक थे। उन्होंने वज्रवर्ट धनुष उठाकर सीता से विवाह कर अपूर्व बल का परिचय दिया था।

(4) उन्होंने म्लेछो के विरूद्ध युद्ध में जनक की मदद कर साधर्मी भाइयों के प्रति प्रेम और मदद के साथ साथ अपने अपूर्व बल का भी परिचय दिया था। साधर्मी भाईयों के प्रति राम का वात्सल्य था यह इस उदाहरण से भी स्पष्ट होता है कि दशांगपुर के राजा वज्रक्रर्ण ने प्रतिज्ञा की थी कि जिनेन्द्र देव के अतिरिक्त अन्य किसी को नमस्कार नहीं करेंगे। उज्जयिनी के राजा सिंहोदर को यह बात असह्य हुई। उसने उसके नगर पर घेरा डाला तथा देश को आग लगाकर विनाश किया राम को जब यह ज्ञात हुआ तो शील गुण के धारक वज्रक्रर्ण की रक्षार्थ राम की आज्ञा से लक्ष्मण ने सिंहोदरको अकेले ही पकड़ लिया और उसकी सेना को परास्त कर दिया और अधिक महानता तो यह है कि जब राम के सामने सिंहोदर को लाया गया तो उन्होंने उसे करूणा बुद्धि से छुड़वा दिया तथा वज्रक्रर्ण के साथ उसकी मैत्री करवा दी।

(5) राम अन्याय सहन नहीं करतें थे तथा वे उनको दण्ड देने में भी पीछे नहीं हटते थे। जब म्लेच्छ बिना कारण के जनक, पर हमला करते हैं तो राम उनकी मदद कर म्लेच्छ को परास्त करते हैं। परन्तु वे बदले को भावना रखने वाले भी नहीं थे। क्योंकि कपिल ब्राम्हण राम, लक्ष्मण, सीता जो भूख प्यास से व्याकुल है, को घर से अनादर कर निकाल देते हैं परन्तु यक्षाधिपति की मदद से जब सोने की नगरी को देख कपिल ब्राम्हण वहाँ के राजा के पास धन लेने आता है व राजा के रूप में राम का नाम सुनकर काँपने लगता है तब राम उसका अनादर करने के बजाय उसे खूब सारा धन धान्य देकर प्रेमपूर्वक भेजते हैं। इस व्यवहार से प्रभावित हो कपिल ब्राम्हण दीक्षा ग्रहण कर साधू हो जाते हैं।

(6) भरत को अपने सगे भाई के समान प्यार करते हैं। वे भरत को दीक्षा न लेने के लिये प्रेमपूर्वक दृष्टि से देखते हुए राम भरत का हाथ पकडकर कहते हैं कि हे भाई अभी तेरी अवस्था तप करने योग्य नहीं है। इसलिए तू राज्य कर जिससे पिता की चन्द्रमा के समान निर्मल कीर्ति फैले।

(7) पिताजी के सत्य वचन की रक्षा के लिये वे सारा राज पाठ छोड़कर वन के लिए लक्ष्मण व सीता के साथ प्रस्थान कर देते हैं। वे वन जाने के लिये क्षणिक भी देर नहीं करते और न दुखी होते हैं। जब उम्हें राज पाठ दिया जा रहा था तो वे खुश नहीं हुए व वन जाने पर दुखी नहीं हुए अर्थात् दुख हो या सुख सबको समान समझकर समता भाव रखना उनकी मुख्य विशेषता थी। हाँ सीता के वियोग (हरण) के समय वे मानव स्वभाववश जरूर विलाप करते हैं परन्तु वे दुख में दुखी हो प्राण नहीं त्यागते व हिम्मत रख कर सीताको पुन: प्राप्त कर अपहरणकर्ता से मुक्त कराने का निश्चय करते हैं।

(8) वे मातृ भक्त व पितृ भक्त थे। वे विमाता केकेयी को जो कि राम का राज्य राम से छिन कर भरत को राज्य व राम के जीवन में वन का दुख भर देती है, उस माता केकेयी को भी राम वन जाते समय उसी प्रकार प्रेमपूर्वक प्रणाम करते है जिस प्रकार अन्य माताओं को करते है। माता को कष्ट न हो इसी काराण वे वन में भी उन्हें लेने जाने की सोचते है। वे पितृ भक्त थे यह तो पिता के सत्य के पालन के लिये वन जाने से ही स्पष्ट हो जाता है। वे पिताजी से कहते है कि "हे पिताजी आप अपने सत्य व्रत की रक्षा कीजिये और मेरी चिंता छोड़िये। यदि आप अपकीर्ति क्रो प्राप्त होते है तो मुझे इन्द्र की लक्ष्मी से भी क्या प्रयोजन?"[11] इस प्रकार वे पिता के वचन की रक्षा के लिये राज पाठ छोड़ स्वयं ही वन चले जाते हैं। जैन रामायण में एक ही वचन की बात है। अत: कैकेयी ने तो सिर्फ दशरथ से एक ही वचन यानी 'मेरे पुत्र के लिये राज्य दीजिये"[12] माँगा था परन्तु राम ने यह सोचा कि भरत मेरे रहते राज्य भार नहीं संभालेगा और पिता के सत्य का पालन नहीं हो पाएगा तो उन्होंने स्वयं ही यह' निर्णय लिया कि वे वन चले जायेगे तो भरत अपने आप राज्य भर संभाल लेंगे व पिता के वचन का पालन होगा। ये राम क्री पितृ भक्ति व मातृ भक्ति ही है जो राम को ऐसा आदर्शमयी पुत्र बनाने के लिये प्रेरित करती है। वे वन में भी माताओं को याद कर लक्ष्मण को लाने के लिये भेजना चाहते हैं परन्तु वर्षाकाल होने के कारण वे सोचते हैं कि माताओं को यहाँ तक आने में तकलीफ होगी, अतः वर्षाकाल समाप्त हो जाने के पश्चात् वे स्वयं जाकर ले आयेंगे।

(9) राम परमार के प्रति अनासक्त थे। वे चन्द्रनखा के अनेक प्रकार के हाव भाव सुन्दर रूप दिखाने के पश्चात् भी उसकी ओर आकर्षित नहीं होते हैं। राम के मन में किसी के भी प्रति विद्वेष नहीं था। वे रावण से सीता वापस लेने के लिये नम्रता के साथ संधि संदेश भेजते हैं और यह भी कहते हैं कि मुझे राज्य से कोई प्रयोजन नहीं है। अन्यस्त्री के साथ मैं भोग की अभिलाषा नहीं रखता। हे रावण मैं तुम्हारे पुत्रों और भाई को वापिस भेजता हूँ, यदि सीता मुझे सौंप दी जाये तो मैं संतुष्ट हो जाऊँगा। लक्ष्मण से युक्त मैं उसके साथ अरण्य में घूमता फिरूँगा हे दशानन इस सारी पृथ्वी का तुम उपयोग करो।[13] इस उदाहरण से स्पष्ट होता है कि वे परनार सेमोह नहीं रखते थे सिर्फ सीता ही उनकी प्राणप्रिया थी तथाउन्हें अन्य राज्यों जैसे लंका आदि से कोई मोह नहीं था। वे तो सिर्फ अपनी सीता को पाना चाहते थे। युद्ध व इतनी जनहानि वे नहीं चाहते थे परन्तु जब रावण नहीं माना तब युद्ध करना आवश्यक हो गया।

(10) युद्ध में जब लक्ष्मण को शक्ति लग जाने से वे मूर्छित हो जाते है तो राम भातृ प्रेम के कारण रोते है। विशल्या के आने से जब शक्ति भाग जाती है तो राम खुश होते है और साथ ही दुश्मन के यानी रावण के भाई आदि को भी ठीक कर अपनी मानवता, उच्च हृदयता का उदाहरण प्रस्तुत करते है।

(11) उन्हें विभीषण की भी चिंता है क्योंकि लक्ष्मण को शक्ति लगने पर वे कहते हैं कि सीता के वियोग में दुख मुझे उतना पीड़ित नहीं करता, जितना असफल होने से मेरा सारा हृदय जल रहा है। क्योंकि सुग्रीव आदि तो सब अपने नगरों को चले जायेंगे, पर हे विभीषण! तुम किस देश को जाओगे।

(12) वे सीता के लोकापवाद की चर्चा सुनकर पीड़ित होते हैं, परन्तु अपनी प्राणप्रिया सीता को क्षण भर में छोड़ने के लिये तैयार हो जाते है। वह सीता जिसके लिये रावण को मारा उस सीता को यह सोचकर कि इस संसार का समस्त राज्य या जीवन लेकर वह व्यक्ति क्या करे, जिसके कि अपयश का प्रबाद सदा घूमता हो, उस भुजबल से क्या लाभ जो भयभीत लोगों के भय का निवारण नहीं करता, उस ज्ञान से क्या लाभ जिससे आत्मा न पहचानी जाये, यदि सीता निर्दोष और शील सम्पन्न भी हो तो क्या में उसका त्याग कर सकता हूँ किन्तु अपयश के मल से कलुषित जीवन में एक क्षण भी नहीं चाहता।[14] लोकरंजन के लिये राम ने सीता का त्याग कर दिया फिर भी सीता को नहीं भुला पाते हैं। सीता तो उनके हृदय में विद्यमान है। 8000 स्त्रियों से घिरे रहने पर भी वे स्वप्न में भी दिन में भी सीता को ही याद कर उसकी कमी महसूस करते थे। वो सीता क्रो हृदय से प्यार करते थे परन्तु प्रजारंजन के लिये उन्होंने अपनी प्राणप्रिया को भी छोड दिया यही आदर्श राजा का गुण होता है कि वे प्रजारंजन जो कि ब्रह्म रूप है कि रक्षा के लिये आंतरिक रूप पत्नी प्रेम को त्याग दे। वैसे दोनों में उन्होंने मर्यादाओं का पालन भी किया है। उनके अंतर्द्वंद्वो में प्रजा सुख महत्वपूर्ण रहा।

(13) राम दुश्मनों से भी विद्वेष नहीं रखते थे क्योंकि रावण की मृत्यु होने के पश्चात् वे कहते हैं कि मरने के पश्चात् बैर नहीं होता। अत: वे अगर, कपूर, चन्दन आदि से रावण का दाह संस्कार करते है तथा मन्दोदरी आदि को सांत्वना देते हैं। राम को राज्य का प्रलोभन नहीं है। अत: वे लंका का राज्य बिभीषण को सौंप क्रर लौट आते हैं।

(14) जब कैकेयी भरत के साथ राम को वन में लेने जाती है तो राम कैकेयी से उसी प्रेम के साथ मिलते है जैसे पुत्र कई वर्षों से अपनी माता से मिल रहा हो और माता क्रो प्रेमपूर्वक कहते है। अकारण भरत को लायी है माँ! मेरा परम तत्व सुनो। मैं पिता के सत्य का पालन करूँगा। न मुझेघोड़ो से काम है, और न रथवरों से। मैं सोलह वर्ष राज्य नहीं करूँगा। पिता ने तो सत्य तीन बार दिया है, वह मैं सौ बार देता हूँ। 15

(15) राम धैर्यवान है, वे युद्ध में, सीता को ढूंढने में, धैर्य धारण किये हुये घूमते हैं। वे एक बार सीता को भी धैर्य धारण करने को क्रहते हैं जब वन में उसे प्यास लगती है तो वे सीता से कहते हैं "है धन्ये, तुम धैर्य धारण करो, हे मृगनयनी तुम अपने मुँह को कायर मत करो।[16]

(16) रावण जब युध्द के दौरान बहुरूपिणी विद्या की सिद्धि के लिये जिन मंदिर में साधना करता है तो राम की सेना में तहलका मच जाता है। वे राम से रावण को जिन मंदिर में साधना में बाधा पहुँचाने के लिये कहते हैं तो फिर महात्मा राम कहते हैं - जो मनुष्य अत्यन्त भयभीत है, उन आदि के ऊपर भी जब हिंसापूर्ण कार्य करना योग्य नहीं है तब जो नियम लेकर जिन मंदिर में बैठा है उस पर यह कुकृत्य करना कैसे योग्य हो सकता है[17] इस प्रकार इसकृत्य को घृणित समझकर मना कर देते है। सीता की अग्नि परीक्षा लेते समय राम मानव मन के अनुसार अग्नि कुंड को देखकर घबरा जाते हैं परन्तु जब अग्नि कुंड जल कुंड बन जाता है तब वे सीता से जो उनकी पत्नी है सभी के सामने माफी माँगते हैं। वे सीता से क्षमा माँगने में भी संकोच नहीं करते हैं। सीताको घर चलने के लिये भी कहते हैं और लव व कुश को अपना लेते हैं। राम भाई लक्ष्मण के मरने पर उसे छ: मास तक कंधे पर लिये घूमते रहते है वे उसे प्रेमवश खाना खिलाने का प्रयास करने हैं, नहलाते है, तैयार करते हैं, वे भाई के प्रेम में अंधेपन की तरह यह नहीं देख पते कि वो मर चुका है। ऐसा था राम का स्वरूप वे एक अच्छे एवं आदर्श भाई, आदर्श पति, आदर्श पुत्र, आदर्श पिता, आदर्श राजा के साथ-साथ वीर सौदर्य व शील के धनी, क्षमाशील, शक्तिशाली, परस्त्री से दूर रहने वाले, साहसी, शांत, गंभीर, विद्वेष न रखने वाले थे। वे अंत में कठोर तप साधना कर केवलज्ञान को प्राप्त करते हुए मोक्ष में जाते हैं।

निष्कर्ष

जैन साहित्य में भी राम के चरित्र ने जितनी लोकप्रियता प्राप्त की है उतनी किसी अन्य के चरित्र ने नहीं। ये 63 शलाका पुरूषों में रखे गये है त्रिषस्टि महान पुरुषों के जीवन चरित्र का वर्णन जैन साहित्य के अनुयोग के प्रथमानुयोग में किया गया है। इस वर्णन क्रा उद्देश्य संसार में पाप निकृष्टता, पुण्य की श्रेष्ठता तथा वृत्त चरित्र सहित मोक्ष मार्ग पर आरूढ हो मोक्ष प्राप्ति का विवरण देना ही होता है। 'राम' इसी प्रथमानुयोग में वर्णित है क्योंकि राम भी महान व मोक्षगामी पुरूष थे। 63 शलाका पुरूष में 24 तीर्थकर, 12 चक्रवर्ती, 9 बलदेव, 9 वासुदेव तथा 9 प्रतिवासुदेव है। क्रमश: बलदेव, वासुदेव व प्रतिवासुदेव समकालीन होते हैं। राम, लक्ष्मण और रावण क्रमश: अष्टम बलदेव, वासुदेव तथा प्रतिवासूदेव है। इनका यह सिद्धांत है कि बलदेव (बलभद्र), वासुदेव (नारायण) किसी एक राजा की भिन्न भिन्न रानियों से उत्पन्न पुत्र होते हैं। वासुदेव अपने बड़े भाई बलदेव के साथ प्रतिवासुदेव (प्रतिनारायण से युद्ध करते हैं और वासुदेव ही प्रतिवासूदेव (प्रति नारायण) का वध करते है तथा अर्द्ध-चक्रवर्ती बन जाते हैं। मरने पर वासुदेव को प्रतिवासुदेव के वध के कारण नरक में जाना पड़ता है व बलदेव अपने भाई की मृत्यु के कारण शोकाकुल होकर जिन दीक्षा ग्रहण कर मोक्ष प्राप्त करते हैं। अत: जैन रामायण में रावण का वध लक्ष्मण करते हैं व राम जिन दीक्षा ग्रहण कर मोक्ष में जाते है।

राम रामायण के नायक है। जैन रामायण के राम भी धीरोदत्त नायक है, उनमें धीरोदत्त नायक के सभी गुण जैसे त्यागी, कृतज्ञ, कुलीन, लक्ष्मीवान, लोगों के अनुराग के पात्र, रूप यौवन और उत्साह से युक्त, तेजस्वी, चतुर, अपनी प्रशंसा न करने वाला, क्षमायुक्त, अत्यन्त बैरी दुश्मन आदि के लिए भी हित सोचने वाला, अतिगंभीर, भयंकर से भयंकर विपत्तियों तथा गहन समस्याओं में भी स्वभाव में ही स्थिर रहने वाला, महासत्व हर्ष, शोक आदि विभिन्न एवं विपरीत अवस्थाओं में अपनी स्थिर वास्तविक वृद्धि को नहीं खोने वाला, संभावयुक्त, स्थेयान- आन्तरिक रूप से अपनी सहजता में ही स्थिर रह सकने वाला, विनय, सरलतादि से प्रच्छन्न मान, गर्व और ओज रखने वाला तथा दृन्वती अपनी बात का पक्का, आन का पूरा भव्य पुरूष (श्रेष्ठ) आदि उक्त गुण विद्यमान है। अत: राम रामायण के धीरोदात्त नायक है। 'राम' शब्द ही ऐसा है जिसमें उसका महत्त्व छिपा हुआ है वह जनमानस की गहराई में बैठ गया है। यह भारत के बहुजन के हृदय के हार, श्रद्धा व भक्ति के केन्द्र है। राम नामकीसुधा ने ही भारत को अपने वतन काल में भी जीवित बनाये रखा और, उसको पुन: उन्नति की ओर अग्रसर किया है। राम शब्द का अर्थ है रावण यानी राक्षस को मारने वाला। जिस प्रकार राहू ने मनसिज अर्थात् चन्द्रमा को पराजित किया है उसी प्रकार राम ने मनसिज अर्थात् काम को पराजित किया है। अत: राहूके 'रा' व मनसिज के 'म' शब्द से राम नाम बना है। इससे स्पष्ट होता है कि राम मर्यादा पुरूषोत्तम थे।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सूर का राम काव्य : डॉ. तिलोकचन्द्र गुप्त, पृ. 13
2. सूर का राम काव्य : डॉ. तिलोकचन्द्र गुप्त, पृ. 13
3. सूर का राम काव्य : डॉ. तिलोकचन्द्र गुप्त पृ. 13
4. डॉ. रामनिरंजन पाण्डेय : राम भक्ति शाखा, पृ. 1 से 3
5. डॉ. तिलोकचन्द्र गुप्त : सूर का राम काव्य, पृ. 14
6. डॉ. तिलोकचन्द्र गुप्त : सूर का राम काव्य, पृ. 14
7. स्मारिका पत्रिका (प्रथम मस्तकाभिषेक एवं अयोध्या विकास), पृ. 194

8. स्मारिका पत्रिका (प्रथम मस्तकाभिषेक एवं अयोध्या विकास), पृ. 195
9. स्मारिका पत्रिका (प्रथम मस्तकाभिषेक एवं अयोध्या विकास) हैं मृ. 196
10. आदिपुराण पृष्ठ 102
11. पदूमपुराण भाग २ पृ. 76
12. पदूमपुराण भाग २ पृ. 75
13. पउमचरिउ 67/6
14. पउमचरिउ **:** विमलसूरि ८५/१५
15. पउमचरिउ भाग २, पृष्ठ २५९
16. पउमचरिउ भाग २ पृ. 125
17. पदूमपुराण भाग -3, पृ. 16